चन्दामामा





भगवान ने यह संसार बनाने के बाद आदि शक्ति को पैदा किया। शक्ति-रूपिणी जगन्माता ने जन्म लेते ही भगवान से पूछा -"भगवान । तुमने मुझे पैदा तो किया। लेकिन क्या तुमने यह भी सोचा है कि मैं खाऊँगी क्या ? मुझे तो जीव- बलि चाहिए।"

तब भगवान ने कहा-"देवी! यह कौन सी बड़ी बात है! संसार में लाखों जीव-जन्तु रहते हैं। पर किस जीव का खून तुम्हें स्वादिष्ट लगेगा, यही जानना है। इसी काम के लिए मैं अपने गुप्तचर मच्छर-राम को मेज रहा हूँ।"

भगवान के आज्ञानुसार मच्छर-राम स्वर्ग से चले और जल्दी ही भूतल पर आ धमके। फिर क्या था-- सूई की सी अपनी पैनी नोक से घूस चूस कर लोगों का खून चखने लगे और खुद परखने लगे कि संसार के किस पाणी का खून कितना स्वादिष्ट है।

इस तरह मच्छर-राम सारे संसार में घूम-घूम कर अपना काम पूरा करके लौटने की तैयारी में थे कि एक पेड़ पर छिपकली रानी बैठी दिखाई दी।

'ओहो! मच्छर- राम जी! वाह! वाह ! आज कैसा अच्छा दिन है। क्या कहना है ? कहाँ से आ रहे हैं आप ? आइए। आइए ! इस पेड़ की छाँह में तनिक सुस्ता लीजिए न !" छिपकली ने बड़े प्रेम से बुलाया।

छिपकली का यह स्नेह मरा बुलावा सुन कर मच्छर-राम खुश हो गए और सोचने लगे-"अच्छा। ठीक तो है। सारे संसार में घूमते-फिरते मैं बहुत थक गया हूँ। फिर इस रानी जी की बात भी भूला ही जा रहा था। इसका खून तो चखा ही नहीं था। अच्छा मौका मिला है; आराम भी

शची देवी



"वाह ! मच्छर-राम जी ! केसी अच्छी खबर सुनाई है आज तुमने। तो तुम हरेक जीव का खून चख भाए हो ! बताओ तो मला तुम्हें किस का खून अच्छा लगा!" छिपकली ने पूछा।

मैं सभी प्राणियों का खून चख आया हूँ। लेकिन मुझे कोई खून उतना अच्छा नहीं लगा जितना आदमी का। मैं यही बात भगवान से कहने जा रहा हूँ।" मच्छर ने छिपकली से कहा।

यह बात सुन कर छिपकली बहुत ही खुश हुई। क्योंकि उसे डर लग रहा था कि कहीं उसकी जात पर यह बला न टूट पड़े। इतने में उसके मन में यह विचार उठा कि देखें, इस मच्छर का खून कितना स्वादिष्ट है। क्योंकि यह संसार के लाखों प्राणियों का खून चख कर आया है।

थोड़ी देर में मच्छर-राम जो बहुत थके-माँदे थे, तुरत झपकी लेने लगे।

छिपकली तो इसी मौके की ताक में थी। वह पलक झपकते ही उस पर टूट पड़ी और उसे हड़प गई। बस, जो मच्छर-राम सारे संसार के प्राणियों का खून चख आए थे, अब

करूँगा और काम भी पूरा हो जाएगा। यह सोच कर मच्छर-राम छिपकली के पास पहुँचे। दोनों में मीठी-मीठी बातें होने लगीं। बातचीत के सिलसिले में मच्छर-राम ने कहा- "छिपकली रानी ! क्या तुम यह नहीं जानती कि भगवान ने जब जगन्माता आदिशक्ति को पैदा किया तो उस देवी के बहार के लिए संसार के किस प्राणी का खून स्वादिष्ट होगा, यह जानने के लिए मुझे गुप्तचर बना कर पृथ्वी पर भेजा। इसीलिए में सारे संसार में घूम कर, हरेक जीव का खून परख कर, अपनी राय भगवान को देने के लिए जा रहा हूँ।"

इस छिपकली के पेट में आकर सदा के लिए सो गए।

चटोरेपन के कारण छिपकली मच्छर को निगल गई। लेकिन थोड़ी ही देर में उसके पेट में खलबली मच गई। उसने सोचा-"मैं सोचे विचारे बिना आदि-शक्ति के दूत को ही निगल गई। अगर देवी को यह बात मालूम हो गई तो ? कितने दिन तक छिपा रहेगा मेरा गुनाह ? न जाने मुझे देवी क्या दण्ड देगी ? अब क्या करूँ ? मच्छर-राम तो कभी के पच भी गए होंगे।" यह सोच कर छिपकली बहुत पछताने लगी। आखिर थोड़ी देर बाद धीरज घर कर छिपकली देवी के पास रवाना हुई।

अब तक वहाँ भी खलबली मच गई थी। हर कोई इस सोच में पड़ा हुआ था कि मच्छर- राम लौट कर क्या राय देंगे। क्योंकि उनकी राय पर संसार के सभी प्राणियों का भाग्य निर्भर था। अब तक चारों ओर अफवाह उड़ गई थी कि मच्छर-राम सारे संसार में घूम कर हरेक पाणी का खून चख चुके हैं। किसी तरह सब को यह भी पता चल गया कि उन्हें आदमी का खून ही सबसे अच्छा लगा है। इसलिए मनुष्य सभी



उदास होकर मुँह लटकाए बैठे थे। लेकिन बाकी सभी जीव-जन्तु यह खबर सुन कर बहुत खुश हो रहे थे।

इतने में छिपकली ने देवी के सामने जाकर प्रणाम करके कहा-"देवी ! मुझे मच्छर-राम ने भेजा है। मच्छर-राम बहुत नाजुक बदन हैं। सारे संसार में घूम घूम कर थक गए हैं और एक जगह लेट कर आराम कर रहे हैं।"

वह और भी कुछ कहना चाहती थी कि इतने में देवी ने उसे टोक कर पूछा -"ठीक है। पर मच्छर जिस काम से गया था वह काम क्या हुआ ! बोलो,

उसकी राय क्या है ? पहले बताओ कि किसका खून सबसे अच्छा है !"

अब तो छिपकली की सिट्टी-पिट्टी गुम हो गई। उसने नहीं सोचा था कि इस तरह उसकी जान पर आ बनेगी। उसने घबरा कर कहना चाहा-"मनुष्य का खून! पर जल्दी में उसके मुँह से निकल पड़ा- महिष का खून !"

तब देवी ने मुसकुरा कर कहा - "ठीक है। मच्छर-राम ने अच्छा ही किया जो अपनी राय देकर तुम्हें यहाँ भेजा। आज से मेरा हुक्म है कि जो कोई मेरी पूजा करे यह महिष की ही बलि दिया करे।" यह कह कर देवी अन्तर्धान हो गई।

तुम तो जानते हो- महिष के माने भैंसा होता है। उसी दिन से देवी के आगे भैंसे काटने का रिवाज चल पड़ा।

देवी का हुक्म सुनते ही मनुष्यों के दिल खुश हो गए। उन्होंने सुख की साँस ली।

मनुष्य जाति का नाश होते होते बच गया था। दूसरे दिन वे सब लोग जङ्गल में, छिपकली जिस पेड़ पर रहती थी वहाँ गए। "ओ छिपकली रानी! दम तुम्हारा एहसान कभी नहीं भूल सकते। तुमने हमारी जाति को जीवन-दान दिया। इसलिए हमारा कर्तव्य है कि हम सब तुम्हारा आदर करें। हम तुमसे एक विनती करना चाहते है। तुम्हें वह माननी ही पड़ेगी। तुम हमारे साथ आकर हमारे घरों में रहो जिससे रोज़ हमें तुम्हारे दर्शन होते रहें। इस तरह जङ्गलों, झाड़ियों और पेड़-पौधों पर रहना तुम्हारी मर्यादा के योग्य नहीं। आओ हमारे साथ !" आदमियों ने छिपकली से कहा।

छिपकली ने मनुष्य की विनती मान ली। इसलिए आज भी जब मनुष्य नया घर बना लेता है, तो उससे भी पहले छिपकली जाकर दीवार पर आसन बना लेती है।

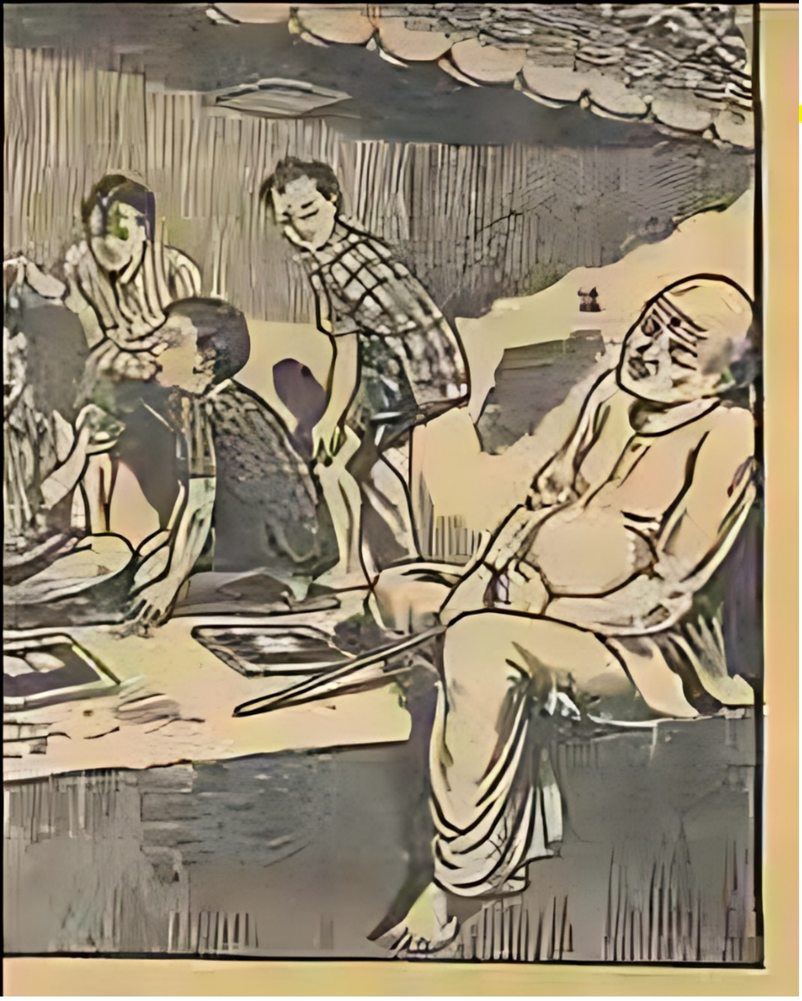




इतने में उसके बेटे की उम्र का ही एक लड़का अन्दर आया और उससे बोला-"अरे ! तुम्हें मास्टर साहब ने बुला लने को कहा है।"

यह सुनकर राजाराम को गुस्से के मारे रुलाई आ गई। "कौन है बे तू? जा ! जा ! उस मास्टर को ही यहाँ आने को कह!" राजाराम ने कहा। लेकिन आखिर राजाराम को स्कूल जाना ही पड़ा। स्कूल से जो छड़का आया था वह बड़ा हट्टा-कट्टा था। उसे देख कर लड़के सभी डर के मारे काँपने लगते थे। जब कोई लड़का स्कूल से जी चुराता तो मास्टर इसी लड़के को उसे पकड़ने मेजते थे। वह लड़का राजाराम का हाथ पकड़ कर घसीटता हुआ खींच ले गया। राजाराम को देखते ही मास्टर ने एक साँटी लेकर दोनों हाथों पर चार चार जमा दिए और कहा -"अरे अभागे। तुम्हारे पिताजी कितने भले आदमी है। बड़े अचरज की बात है कि उनके वंश में तेरे जैसा कपूत पैदा हुआ। रोज रोज तुम्हारी बदमाशी बढ़ती जाती है। अब मैं बर्दाश्त नहीं कर सकता। देख ले, अब हथकड़ी-बेड़ी लग जाएगी। क्या समझ रखा है तूने मुझे ?" उसने डपट कर कहा।

राजाराम की आँखों से आँसुओं की धार वह बली। यह अपमान सहने के बाद मरना ही बेहतर जान पड़ा। उस मास्टर को, उसके पढ़ाने के ढङ्ग को और पढ़ने वाले लड़को को देख कर राजाराम को बहुत अचरज हुआ और गुन्सा भी आया। यह कैसा मास्टर है और यह कैसी पढ़ाई है? क्या बेचारा नारायण इतने दिनों से ऐसी ही जगह पढ़ रहा था ? थोड़ी देर तक लड़कों ने आँकड़े रटे। इसके बाद महीनों और दिनों के नाम रटे। उसके बाद मास्टर ने लड़कों को समझाया-"अरे! कोई शोर न मचाना ! नहीं तो चमड़ी उधेड़ दूँगा।" यह कह कर यह दीवार से पीठ टिका कर ऐसा खर्राटें लेने लगा कि नाक में अगर मक्खी भी घुस आए तो कोई पता न चले।



अब लड़कों ने उधम मचाना शुरू किया। सभी लड़के राजाराम के चारों ओर जमा हो गए। सभी उसे नारायण कह कर पुकारते थे। पर उसको किसी का नाम न मालूम था। वह किसी को न जानता था। यह बात बेचारे लड़के क्या जानें। उन्होंने समझा कि नारायण को गुमान हो गया है। इसलिए आज वह किसी से बातें भी नहीं करता। अब वे राजाराम को चिढ़ाने लगे। एक ने उसका कान उमेठ दिया। दूसरे ने जाँघ में चिकोटी काट ली।

राजाराम को बड़ा गुस्सा हुआ कि ये नादान छोकरे उसकी यह दुर्गत बना रहे हैं। लेकिन यह रोने के सिवा उनका कुछ नहीं बिगाड़ सकता था। आखिर जब उससे यह सब बर्दाश्त नहीं हुआ तो जोर से चिल्ला उठा। लड़कों ने नहीं सोचा था कि वह उस तरह चिल्ला उठेगा। क्योंकि उन्हें मालूम था कि मास्टर साहब जाग जाएँगे। इसलिए तुरन्त सब लोग जाकर चुपके से अपनी बगह पर बैठ गए। मास्टर जग ही गया। उसने उठते ही साँटी हाथ में ली और लगा राजाराम को अन्धाधुन्ध पीटने। राजाराम के तो होश ही उड़ गए। "भाड़ में जाए तेरी पढ़ाई। अभागा कहीं का ! क्या इसीलिए मैंने तुझे रूपये दिए थे ? देख अब तेरा क्या हाल बनाऊँगा। क्या तू बात बात पर लड़कों को पीटेगा ? तेरे हाथ टूट क्यों न गए !" राजाराम मास्टर को डाँटने लगा।

यह सुनकर बाकी सभी लड़के हँस पड़े। मास्टर एक पल भर तो हका-वक्का सा रहा। फिर न जाने क्या सोच कर राजाराम को दीवार से सट कर खड़े होने कहा। इस तरह पल पल राजाराम का अपमान बढ़ता ही गया ।

तब मास्टर ने राजाराम से सवाल करना शुरू किया। उसने मास्टर के कुछ सवालों का बड़ी आसानी से जवाब दिया। लेकिन कुछ

का जवाब वह नहीं दे सका। जो बातें किताबें रहने से ही मालूम होती है वे राजाराम कैसे जान सकता है ? दीवार से टिक कर खड़े होना राजाराम के लिए मुश्किल हो गया। लड़के सभी उसकी हँसी उड़ाने लगे। अब राजाराम उनकी नजर में और भी गिर गया था। मास्टर ने भी उन लड़कों को मना नहीं किया। तब मास्टर ने हिसाब के सवाल पूछे। लेकिन उसके सवाल पूरे करने के पहले ही राजाराम उनके जवाब देने लगा। अब तो मास्टर दङ्ग रह गया। क्योंकि नारायण तो गणित में बिल्कुल पैदल था। वह आज इस तरह छूटते ही कैसे जवाब दे रहा है!

"बदमाश कहीं का! इतने दिन से ऐसे बहाना बना रहा था जैसे हिसाब आता ही न हो।" यह कह कर मास्टर ने राजाराम को फिर तीन चार छड़ी जमा दी।

राजाराम बड़ा बेचैन हो उठा। कब दुपहर हो और कब वह मास्टर से छुट्टी लेकर पर जाए। आखिर किसी तरह मास्टर ने स्कूल छोड़ा। कोई मामूली लड़का होता तो गाली- मार खाने के बाद तुरन्त भूल जाता। लेकिन राजाराम तो वास्तव में लड़का था नहीं। इसलिए वह इस अपमान को भूल न सका। लड़के सब घर चले। कुछ तो दौड़ने लगे। कुछ हँसी-मजाक करते हुए धीरे धीरे चलने



लगे। एक राजाराम के सिवा किसी के मन में उदासी न थी। कुछ लड़के राजाराम को घेर कर पूछने लगे - "क्यों रे नारायण ! बता ! असल में बात क्या है। तू तो बिलकुल बदल गया है। बात भी नहीं करता है।" "हाँ, मैं सचमुच बदल गया हूँ। मेरा नाम नारायण नहीं है। मुझे तङ्ग मत करो!" राजाराम ने झुँझला कर कहा।

घर जाकर क्या किया जाए ? नारायण क्या कर रहा होगा ? राजाराम ने सोचा कि उसका भेद अब तक सबको गाम हो गया होगा। यह विचार मन में उठते ही फिर आशा सिर उठाने लगी। यह सच है कि कोई उसे देख कर विश्वास नहीं कर सकता कि वही राजाराम है। लेकिन नारायण को देख कर उसे राजाराम समझ लेना भी मुश्किल है। उससे बहुत से लोग मामले मुकदमे के बारे में बातें करने आयेंगे। उन सबको नारायण क्या जाने ? इसलिए अब तक उसका भेद जरूर सब पर खुल गया होगा। इसी आशा से राजाराम जल्दी-जल्दी पर की तरफ चलने लगा। तिस पर पेट में भी चूहे दौड़ रहे थे। वहाँ महाराबिन बैठी राह देख रही थी।

"आओ बेटा! मैं तुम्हारे लिए ही बैठी हूँ। न जाने तुम्हें कितनी भूख लगती



होगी।" यह कह कर महाराजिन राजाराम को अन्दर ले गई और पास बैठ कर खूब खिलाने लगी। "मास्टर ने खूब मारा था क्या ?" उसने पूछा।

तुरन्त राजाराम का मुँह लाज से खाल हो गया। "क्या मेरे लिए कोई आया था ?" राजाराम ने बात बदलने के लिए पूछा।

"तुम्हारे लिए कौन आएगा ! बेटा!" महाराजिन ने कहा।

राजाराम ने महाराजिन से नारायण के बारे में पूछना चाहा। लेकिन उसे नहीं सूझा कि बात कैसे उठाई जाए। इतने में महाराजिन ने खुद कहना शुरू किया-"तुम्हारे पिताजी के लिए बहुत से लोग आए थे। लेकिन उनकी तबीयत अच्छी नहीं थी। इसलिए वे एक दो के सिवा और किसी से नहीं मिले। अब भी कमरे में चादर तान कर सो रहे हैं।"

"कौन कौन आए थे मिलने के लिए?" राजाराम ने पूछा।

महाराबिन ने दो तीन नाम बताए। अब राजाराम की बेचैनी और भी बढ़ गई। उसने जल्दी-जल्दी भोजन पूरा किया और जाकर कमरे का दरवाजा खटखटाया। लेकिन



दरवाजा नहीं खुला। "नारायण ! नारायण !" राजाराम ने पुकारा।

"कौन ? आप !" नारायण ने कहा ।

"हाँ ! दरवाजा खोलो। तुमसे बात करनी है।" राजाराम ने कहा।

"अभी मैं सोने जा रहा हूँ। तड़के उठ कर बातें करेंगे।" नारायण ने जवाब दिया।

तब राजाराम चिल्लाने लगा कि दरवाजा जल्दी खोलो। लेकिन इतने में उसकी आवाज सुन कर एक नौकर ऊपर आया और उसे घसीटते हुए नीचे ले गया। "देखो। यह ठीक नहीं है छोटे बाबू। अगर



बड़े बाबू जग गए तो फिर तुम्हारी खैर नहीं। समझे!" नौकर उसे चेता कर चला गया।

तब राजाराम को एक उपाय सुझा। उसने सोचा-"जान-पहचान के सब लोगों को पत्र लिखूँगा कि में ही राजाराम हूँ।" लेकिन इतने में उसे याद आ गया कि उसकी लिखावट भी बदल गई है। लिखावट देख कर कोई उसे नहीं पहचानेगा। राजाराम गहरे सोच में डूब गया। लेकिन उसे कोई चारा न सूझा। थोड़ी देर में उसे फिर स्कूल जाना था। अब वह अपनी दुर्दशा पर आप आँसू बहाए या घर के मामले ही सोचे ! जब तक नारायण का भेद लोगों पर नहीं खुलेगा तब तक उसकी बातों पर कोई विश्वास नहीं करेगा। इसलिए अच्छा हो अगर वह तब तक कहीं भाग जाए। इस उनसे छूटने का यही सबसे अच्छा रास्ता है। लेकिन नारायण को यह मालूम हो गया तो वह उसे कहीं नहीं जाने देगा। फिर उसके पास रुपए भी तो नहीं थे। लेकिन राजाराम ने सोचा-"रुपए की क्या जरूरत है!" इसलिए राजाराम चुपके महाराजिन और नौकर की आँख चुरा कर घर से निकला और स्टेशन की ओर चला। ढाई बजे एक गाड़ी थी। वह उस पर चढ़ जाएगा। पर उसने न सोचा कि जाना कहाँ होगा और वहाँ जाकर वह करेगा क्या?

इधर दिन भर नारायण कमरे में दुबका रहा। एक आदमी रुपए उधार लेने आया। नारायण ने उसे देखे बिना ही महाराजिन से उसे रूपये दिला कर अपना पिण्ड छुड़ा लिया। और एक आदमी ने आकर कहा कि उसके बीस रुपए आने हैं। नारायण ने उसे भी रुपए देकर भेज दिया। और एक आदमी किसी मामले में बात करने

आया। लेकिन नारायण बाहर नहीं आया। नारायण को अब मुश्किल मालूम होने लगी। उसे सबसे बड़ा डर तो यह था कि महाराज और दूसरे नौकरों को भी उसके बारे में शक होने लगा है। महाराजिन उसकी तरफ घूर कर देखने लगी है। नारायण ने पहले सोचा था कि किसी को उसके राजाराम होने में सन्देह नहीं रहेगा। लेकिन अब यह गुमान छूटने लगा। उसने सोचा- "मेरी बातें और मेरी चाल बच्चों की सी जरूर जान पड़ती होगी। शक होना तो अच्छा नहीं क्योंकि एक बार शक हो जाने पर उस पर विश्वास जाने में देर नहीं लगती। यह हेर-फेर सिर्फ उसी में तो है नहीं। उसके पिता भी तो बदल गए है। गौर से देखने पर उन्हें भी पहचानने में उतनी मुश्किल नहीं होती। दस,बारह साल के लड़के में पचास साल के आदमी की परछाई दिखाई पड़ती है। ठीक उसी तरह जैसे उसके चेहरे में बच्चों के लच्छन दीख पड़ते हैं। क्या यह सच दूसरे लोग देखते नहीं होंगे ? महाराजिन ने तो जरूर भाँपा होगा !

शाम हो गई। धीरे धीरे अन्धेरा होने होगा। लेकिन नारायण को कमरे से निकलने



का साहस न हुआ। क्योंकि उसके पिताजी से मिलने के लिए रात के नौ-दस बजे तक लोग आते जाते रहते थे। आठ बजे के करीब महाराजिन ने उपर आकर कहा- "बाबूजी! छोटे बाबू कहीं गायब हो गए हैं।"

"क्या वह स्कूल से लौट कर नहीं आया ?" नारायण ने पूछा।

"वह स्कूल गए ही नहीं थे। मैंने समझा कहीं खेलने चले गए होंगे।" महाराजिन ने कहा।

"तुमने उसे फटकार कर स्कूल क्यों नहीं मेजा ?" नारायण ने पूछा।

"मैं अब छोटे बाबू को फटकार नहीं सकती। वे पहले जैसे नहीं रहे। मैं आपको भी कह सुन सकती हूँ। लेकिन अब मुझे छोटे बाबू को देखते ही डर लगता है।" महाराजिन ने कहा ।

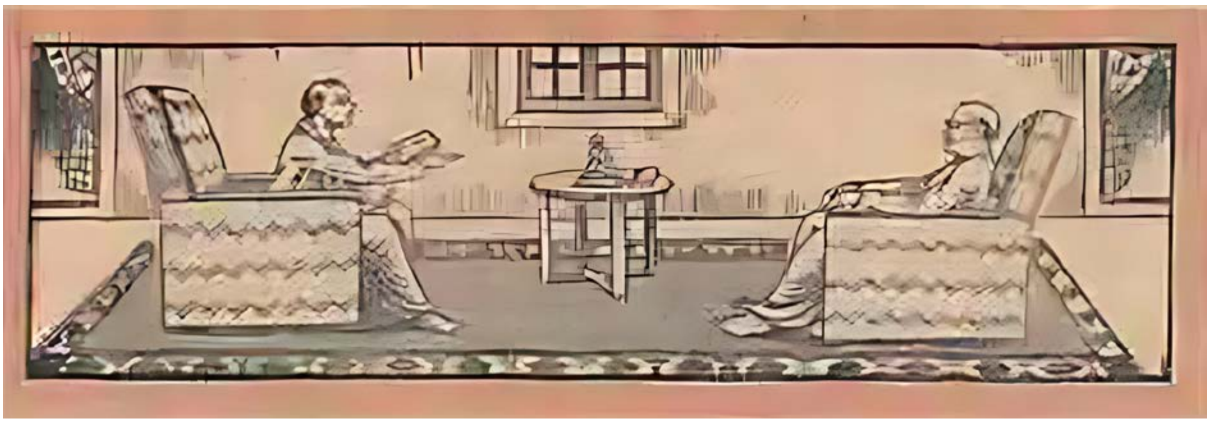
नारायण ने जो सोचा था ठीक नही हुआ। सच्ची बात नहीं छिपती। नारायण सोच में पड़ गया। उसे डर लगने लगा कि उसके पिता किसी तरह चालाकी से उसका भेद सारे संसार पर प्रगट कर देंगे।

"आप आइए। भोजन कर लीजिए। छोटे बाबू कहीं गए होंगे। वही लौट कर आ जाएँगे !" महाराजिन ने कहा।

"नहीं। अभी नहीं। में थोड़ी देर बाद खाऊँगा।' नारायण ने कहा।

"यह क्या? क्या बैद्य ने नहीं कहा था कि खाने के बाद आप को कम से कम दो घण्टे तक सोना नहीं होगा। आइए। बल्दी खा लीजिए। नहीं तो फिर बीमार हो जाइएगा।" यह कह कर महाराजिन चली गई। नारायण ने उठ कर चुपके खाना खा लिया।

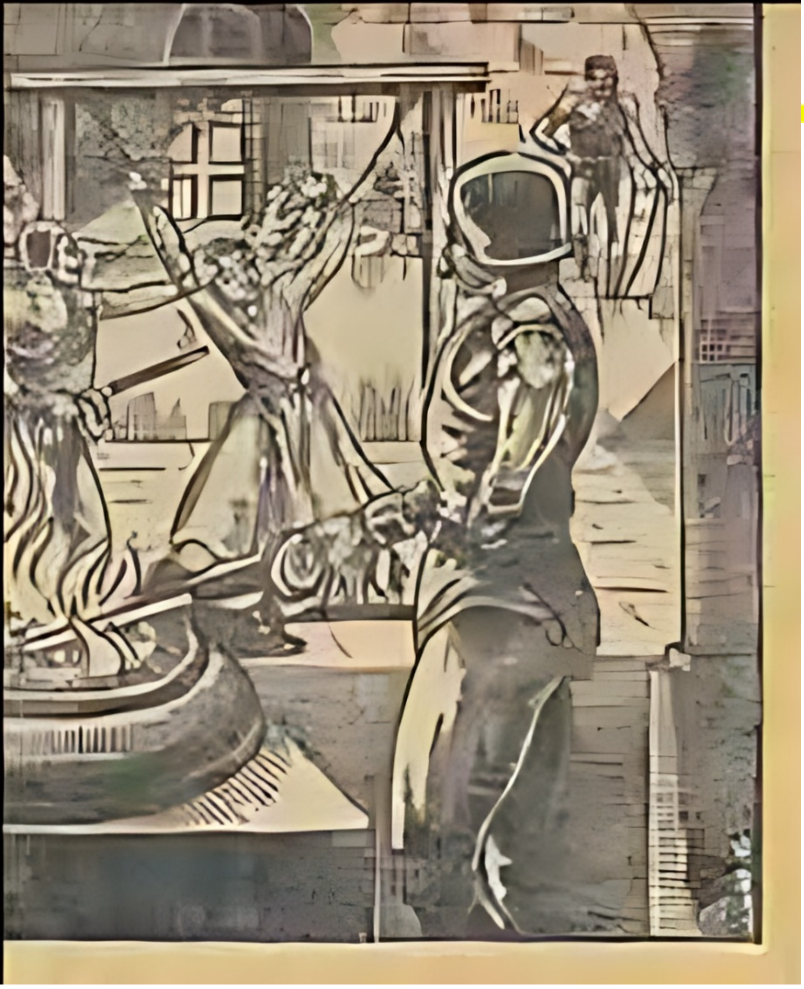
[संशेष]





किसी समय आसाम पर गदापाणी नामक राजा राज करता था। उसकी रानी का नाम जयमती था। वे दोनों प्रजा का अपनी सन्तान की तरह पालन किया करते थे। इसलिए उनके राज में लोगों को किसी तरह के दुख न थे। लेकिन अच्छे से अच्छे राजाओं के भी दुश्मन होते ही हैं। संसार के सब लोग गदापाणी की बडाई करते थे। लेकिन उसका भी एक दुश्मन था। उसका नाम लाड़ा राजा था। वह पड़ोस का एक राजा था। भारी मूर्ख और बड़ा दुष्ट था वह । उसके पास बहुत बड़ी सेना थी। बात बात पर वह पड़ोसी राम पर पढ़ाई कर देता था। गदापाणी भी जानता था कि वह कभी न कभी उसके राज पर भी चढ़ बैठेगा। कुछ दिन बाद लाडा राजा ने अचानक गदापाणी के राज पर चढ़ाई कर दी और उस पर कब्ज़ा कर लिया। उसके पास सेना भी बहुत थे इसलिए उसने चढ़ाई कर दी। उसके मन में राज का लोभ था। इसलिए उसने गदापाणी का राजपाट छीन लिया। लेकिन फिर भी लाड़ा राजा के मन में चैन न हुआ। इसका एक कारण था। लाड़ा राजा जन्म से क्षत्रिय न था। इसलिए लोग मन ही मन उससे घृणा करते थे। वह अपनी सेना के जोर से लोगों को दबा सकता था। लेकिन उसको मालूम था कि कभी न कभी वे बगावत कर बैठेंगे। तिस पर गदापाणी के और उसके पालन में आकाश- पताल का अन्तर था। यह भी लोग अच्छी तरह जानते थे। इसी से एक नया राज जीतने के बाद भी लाड़ा राजा के मन को सन्तोष न हुआ।

इसर राज-पाट से हाथ धोकर गदापाणी ने जङ्गल की राह पकड़ी। फिर भी लाड़ा राजा के



तो फिर उन्हें गद्दी पर बैठने का हक न रहेगा। फिर भी गदापाणी जिन्दा ही था और उसे सब लोग बहुत चाहते भी थे। राजा ने सोचा कि दुश्मन को बचा न रखना चाहिए। इसलिए उसने अपने सिपाहियों को हुक्म दिया-"जाओ। किसी तरह गदापाणी को पकड़ लाओ !"

ये सिपाही खोजते खोजते आखिर उसी जङ्गल में पहुँचे जिसमें गदापाणी छिपा था। इस बीच में जगल में ही गदापाणी का एक सुन्दर लड़का पैदा हुआ जो सचमुच एक लाल था। उसका नाम रुद्रसिंह रखा गया। स्त्री-पुरुष दोनों उसे प्रेम से पालते हुए अपने सब कष्ट भूल कर सुख से जीवन बिता रहे थे। जब गदापाणी ने लाडा राजा के सिपाहियों को यम के दूतों की तरह आते देखा तो वह घबरा गया। उसने तुरन्त लड़के को बाँह में जकड़ लिया और अपनी पत्नी के साथ भागने लगा। इस तरह भाग कर यह थोड़ी ही देर में ओझल हो गया और नाग-पर्वत पर जाकर छिप गया। लेकिन बेचारी जयमती अपने पति के समान कैसे भाग

मन का भय दूर न हुआ। उसके मन में शङ्का बनी ही रही कि कभी न कभी लोग बगावत कर देंगे और गदापाणी को लाकर फिर गद्दी पर बिठा देंगे। गदापाणी नहीं तो वे राज-वंश के किसी दूसरे राजकुमार को ही राजा बना सकते हैं। इसी डर से लाड़ा राजा ने हुक्म दिया कि राजवंश के सब लोगों को अन्धा या काना बना दो। क्योंकि उस समय का यह एक नियम था कि राजवंश के होने पर भी लँगड़े , लूले , काने या अन्धे राजगद्दी पर बैठ नहीं सकते थे। लाडा राजा ने सोचा कि राज-वंश के सब लोग अन्धे या काने हो जाएँ

सकती थी। वह पिछड़ गई और सिपाहियों ने उसे पकड़ लिया। उन्होंने उसे ले जाकर अपने राजा के सामने खड़ा कर दिया। लाड़ा राजा ने जयमती को बहुत सताया। लेकिन वह उससे गदापाणी का पता न जान सका।

इतने में किसी दोस्त ने गदापाणी को सूचना दे दी कि उसकी रानी पकड़ी गई है। यह खबर सुनते ही गदापाणी ने अपने लाल को उस दोस्त के हाथ में सौंप दिया और खुद भेष बदल कर लाडा राजा के महल में प्रवेश कर गया।

जयमती बहुत होशियार थी। उसने अपने पति को देखते ही तुरन्त पहचान लिया। लेकिन वह जानती थी कि पकड़े जाने पर उसकी क्या दशा होगी। इसलिए उसने अपने मन की बात उसे बताने के लिए एक अच्छा उपाय सोचा। उसने उसे देखते ही कहा-"दादा! आप यहाँ आए ? जाइए! जाइए! अगर आपको अपने प्राणों की कुछ भी परवाह हो तो तुरन्त यहाँ से चले जाइए। अगर आपको कहीं मेरे पति दिखाई दें तो उनसे कह दीजिए कि



वे इस ओर न आएँ। आप से मेरी यही विनती है।"

जिन जिन लोगों ने उसकी ये बातें सुनीं उन्होंने सोचा कि वे उसके कोई रिश्तेदार हैं।

किसी को शक न हुआ कि ये ही उसके पति हैं।

उसकी बातों का भेद जान कर गदापाणी तुरन्त वहाँ से चला गया। उसने सोचा-"अगर में यहाँ से चुपचाप चला जाऊँ, तो कम से कम रानी की जान तो बचेगी।"

लेकिन भगवान की इच्छा और ही थी। कोमल मन बाली जयमती अपने पति को

प्राणों से भी अधिक प्यार करती थी। वह दुश्मनों के हाथों में अपमान भरी जिन्दगी ज्यादा दिन बर्दाश्त न कर सकी। वह चिन्ता से घुल-घुल कर कुछ ही दिनों में स्वर्ग सिधार गई।

गदापाणी ने, जिसको जयमती प्राण से भी प्यारी थी जब यह खबर सुनी तो वह गिर पड़ा और तड़प कर अपनी जान दे दी।

जब राजा-रानी के मरने की बात धीरे धीरे लोगों में फैल गई, तो उन्होंने सोचा 'लाडा राजा' ने ही हमारे प्यारे राजा और रानी को मारा है। उनके मन में यह बात गड़ गई और वे मन ही मन लहू की घूँट पीकर मौके की राह देखने लगे।

कुछ दिन बाद उन्हें मालूम हो गया कि गदापाणी का लड़का रुद्रसिंह अभी जिन्दा है और वह बड़ा भी हो गया है। यह जानते ही उनके दिलों में जोश भर गया। उन्होंने तुरन्त बगावत का झण्डा खड़ा कर दिया और रुद्रसिंह को अपना राजा घोषित कर दिया। कुछ ही दिनों में लोगों ने लाडा राजा को मार भगा दिया और रुद्रसिंह को गद्दी पर बिठा दिया।

रुद्रसिंह अपने पिता की ही तरह बहुत ही दयालु और धर्मात्मा था। उसका शासन इतना अच्छा था कि कुछ ही दिनों में पिता से भी उसका नाम बढ़ गया। रुद्रसिंह ने अपनी माता जयमती की यादगारी में शिवसागर से तीन मील की दूरी पर 'जय- सागर' नाम का एक सुन्दर और विशाल सरोबर खुदवाया। वहीं उसने 'जय-मन्दिर' नामक एक सुन्दर मन्दिर भी बनवाया। आज भी आसाम के लोग इन दोनों यादगारों को देख कर रानी जयमती और गदापाणी की याद करते हैं।





किसी समय किसी राजा की खिदमत में पीरू नाम का एक धोबी रहता था। पीरू को एक अशर्फी माहवार मिलती थी। उस राजा के मन्त्री को दो सौ अशर्फियाँ माहवार मिलती थीं। हर महीने दो सौ अशर्फियाँ राजा के खजाने से निकल कर मन्त्री की जेब में जाते देख पीरू को बहुत दुख होता था। वह चौबीसों घण्टे राजा की सेवा करता था। तो भी उसे एक दो अशर्फी मिलती थी। मन्त्री रोज एकाध बण्टा कागज-पत्र पुलटता और राजा से गप-शप करके घर चला जाता था। पर उसे दो सौ अशर्फियाँ माहवार मिलती थी। यह क्यों! पीरू ने बहुत सोचा कि मन्त्री को उतना ज्यादा और उसे इतना कम वेतन क्यों दिया जा रहा है। लेकिन यह उसकी समझ में न आया। आखिर पीरू अब ज्यादा न रुक सका। उसने एक दिन अकेले में राजा से इसका कारण पूछा।

राजा ने उसकी बात बड़े ध्यान से सुनी। उन्हें बिलकुल गुस्सा न आया। वे मन में कुछ सोचते रहे और धोबी की बात का कोई जवाब न दिया।

उसी शाम को राजा साहब पीरू को साथ लेकर टहलने चले | थोड़ी दूर जाने पर उन्हें एक तालाब के किनारे बहुत बड़ी भीड़ दिखाई दी। तब राजा ने धोबी से कहा-"पीरू! जाकर देख तो आ कि बात क्या है?"

पीरू तुरन्त दौड़ कर उस तालाब के किनारे गया। लेकिन उसे लौट कर आने में पन्द्रह मिनट लग गए।

"क्या बात है पीरू" राजा ने फिर पूछा।



"हुजूर! बहुरूपिए हैं। लोग उनके चारों ओर खड़े होकर तमाशा देख रहे हैं।" पीरू ने जवाब दिया।

"किस गाँव से आए हैं ये बहुरूपिए !" राजा ने पूछा।

पीरू उनकी बात का जबाब न दे सका। क्योंकि उसने यह तो पूछा ही न था। "अभी जाकर पूछ आता हूँ।" कह कर वह दौड़ा और पन्द्रह मिनट में लौट आया। "हुजूर ! ये बहुरूपिए बेलगाँव से आए है।" उसने कहा।

यह जवाब सुन कर राजा एक पल चुप रहा। फिर बोला "बेलगाँव के बहुरूपिए हैं। तब तो राज-महल में भी इनका तमाशा होना चाहिए। अच्छा यह तो बताओ कि ये लोग हमारे नगर में कितने दिन रहेंगे।" राजा ने फिर पूछा।

लेकिन पीरू यह कैसे बताए ? उसने तो यह सब पूछा ही नहीं था। उसे तो यह बात सूझी ही न थी। "ठहरिए हुजूर ! ने अभी जाकर पूछ आता हूँ।" यह कहकर वह फिर दौड़ कर तालाब के किनारे गया। इस बार उसे लौट कर आने में आधे घण्टे के करीब लग गया। "कहा है कि दस पन्द्रह दिन रहेंगे।" उसने राजा से आकर कहा।

"तब तो हमारे शिकार खेल कर लौट आने तक रहेंगे ही। तो वे कुछ नए तमाशे भी करेंगे या सभी पुराने ही!" राजा ने फिर पूछा।

लेकिन पीरू इस बात का जवाब कैसे दे? उसे यह बात जानने के लिए फिर एक बार

तालाब के किनारे जाना ही पड़ेगा। "इजाजत हो तो जाकर पूछ आता हूँ।" उसने राजा से कहा।

"हाँ, पूछ आओ! यह जरूरी है। अगर वे कुछ नए तमाशे नहीं कर सकते

तब उन्हें महल में बुलाने की जरूरत ही न होगी।" रजा ने फिर कहा।

"वो अभी पूछ आता हूँ। हुजूर!" यह कह कर पीरू फिर तालाब के किनारे गया। उसके लौट जाने में और एक आधा घण्टा लग गया। इस तरह चार बात पूछ आने में करीब एक घण्टे से ज्यादा ही लग गया। चार बार दौड़ कर तालाब के किनारे जाते-जाते, दो मील का दौड़ना हो गया। पीरू को पसीना निकल आया और वह हाँफने लगा। "हुजूर! मालूम होता है, वे बहुत से नए तमाशे करने वाले है।" उसने हाँफते हुए राजा से आकर कहा।

"तब तो महल में उनका तमाशा जरूर करवाना चाहिए। यह बात उनसे कह आए हो न ?" राजा ने पूछा।

"कौन सी बात हुजूर!" पीरू ने कहा। उसे डर लगा कि कहीं उसे फिर दौड़ कर जाना न पड़े।

"यही कि इस शहर से जाने के पहले उन्हें महल में एक बार तमाशा करना होगा।" राजा ने कहा।



"हुजूर! आपकी इजाजत लिए बिना में उनसे कैसे यह बात कह सकता था !" पीरू ने कहा।

"अच्छा, कोई हर्ज नहीं। जाओ। उनसे यह बात कह आजो।" राजा ने कहा।

राजा की यह बात सुनते ही उसके होशोहवास उड़ गए। वह झुँझला कर मन ही मन सोचने लगा-"आज राजा साहब को यह क्या सूझी है। वे मुझे क्यों इस तरह दौड़ा रहे हैं ? पहले तो ये कभी इस तरह के काम मुझे नहीं सौंपते थे। कपड़े धोना, पंखा झलना, दरी जाजिम बिछाना, ऐसे ऐसे काम

सभी में कर सकता हूँ। लेकिन ऐसी उधेड़-बुन में कभी नहीं पड़ा था मैं ! एक काम के लिए चार चार बार दौड़ना ?"

इतने में मन्त्री भी वहाँ आ गए। तब राजा ने उनसे तालाब के किनारे की भीड़ की ओर इशारा करके कहा-" जाकर र देख आइए तो, क्या बात है ?" थोड़ी देर में मन्त्री ने लौट कर कहा- "हुजूर! बेलगाँव के बहुरूपए हैं। उनका तमाशा देखने के लिए लोग जमा हो गए हैं। मालूम होता है कि ये बहुरूपिए हमारे शहर में दस-पन्द्रह दिन रहेंगे। कहते हैं कि इस साल बहुत से नए तमाशे करेंगे। हुजूर मैं उनसे कह आया हूँ कि हमारे राजा साहब कल शिकार खेलने जाएँगे और दो तीन दिन में लौट आएँगे। तब तुम लोग आकर एक बार उनके दर्शन कर लो। हुजूर चाहें तो उनके तमाशे देख सकते हैं।" मन्त्री ने नम्रता से कहा। थोड़ी देर में मन्त्री श्री चले गए।

तब राजा ने पीरू से कहा -"पीरू, देखा तुमने। मन्त्री तालाब के किनारे एक बार जाकर दस मिनट में सारी बातें जान आए। तुम्हें यह सूझी ही नहीं कि सारी बातें जान लेनी चाहिए। इसलिए मुझे बार बार पूछना पड़ा और तुम्हें बार बार दौड़ कर जाना पड़ा। मन्त्री ने सिर्फ बात ही नहीं जान ली; बल्कि उन्हें बुलावा भी दे आया। बुलावा तो दिया लेकिन उसने उनसे यह नहीं कहा कि तुम महल में समाशा करो। राजा साहब तुम्हारे तमाशे देखना चाहते हैं। क्या अब तुम्हें मालूम हो गया कि मन्त्री को तुमसे ज्यादा वेतन क्यों दिया जाता है है। धोबी अपनी मूर्खता पर लजा गया।





कोटीपारा नामक गाँव में हरिनाथ नाम का ब्राह्मण रहता था। उसके अतिथि सत्कार का बहुत बड़ा नाम था। उसके घर जाकर कभी कोई भूखा नहीं लौटता था ! उसकी इस ख्याति का श्रेय था असल में उसकी स्त्री अन्नपूर्णा को। वह माता अन्नपूणा की तरह अतिथि अभ्यागतों को बड़े प्रेम से खिलाती पिलाती थी। उस ब्राह्मण के सोमनाथ नाम का एक लड़का था । सोमनाथ का ब्याह अनसूया नाम की लड़की से हुआ।

जब नई बहू ससुराल आई तो उसी समय अन्नपूर्णा को अपने भाई के ब्याह में मायके जाना पड़ा।

जाते समय उसने बहू को बुला कर कहा-"बेटी ! घर आए अतिथि अभ्यागतों का खूब स्वागत-सत्कार करना। खाना परोस कर चुप नहीं बैठी रहना कि जिस चीज़ की जरूरत होगी ये माँग लेंगे। इस बात पर ध्यान रखना कि खाने की चीजों में कौन सी चीज उन्हें अधिक रुचती है। यह चीज उन्हें बार बार परोसना। वे सङ्कोच से कहेंगे-"नहीं चाहिए।" फिर भी आग्रह करके उन्हें खिलाना होगा।"

इस तरह समझा-बुझा कर हरिनाथ और उसकी स्त्री चले गए। उनके जाने के दूसरे ही दिन नील गाँव के नीलकण्ठ पण्डित उनके घर आए।

उन्होंने चबूतरे पर बैठे हुए सोमनाथ को देख कर कहा -"बेटा! मैं पराए गाँव से आया हूँ। भूखा हूँ। गाँव के लोगों ने मुझे तुम्हारे घर का रास्ता बता दिया है।"



सोमनाथ ने उनकी आव-भगत करके कहा-"आइए! नहा-धो लीजिए। भोजन में देर नहीं है।" यह कह कर उसने उन्हें कुँआ दिखा दिया।

नीलकण्ठ नहा धोकर आए और सन्ध्या-वन्दन करके सारे बदन में चन्दन लगाया और पीढ़े पर बैठ कर कहा-"अब तुम परोस सकती हो।"

उस दिन अनसूया ने साग, बैंगन, सहजन की कड़ी और नारियल की चटनी बनाई थी। जब परोसना हो गया तो घी डाल कर नीलकण्ठ ने तरकारी-भात मिलाया।

अनसूया वहीं खड़ी होकर सास के कथनानुमार देख रही थी कि मेहमान को कौन सी चीज ज्यादा पसन्द है।

नेमी नीलकण्ठ जी के भोजनसम्बन्धी दो नियम थे। एक तो वे भोजन करते वक़्त बोलते नहीं थे। दूसरे, पत्तल में कोई चीज छोड़ते नहीं थे।

वास्तव में ये दोनों नियम बहुत अच्छे थे। क्योंकि बैद्यों का कहना है कि खाते बक़्त मन में कोई चिन्ता नहीं रहनी चाहिए। ध्यान भोजन पर ही रहना चाहिए। भोजन करते समय बोलने से ध्यान जाता है और खाना जल्दी हजम नहीं होता।

दूसरा नियम भी अच्छा ही था। खाना छोड़ना नहीं चाहिए। कुछ लोगों की आदत होती है कि जितना खाते नहीं उससे भी ज्यादा पत्तल में छोड़ देते हैं। कौन कहेगा कि इस तरह अन्न को फेंक देना अच्छा है जब कि अनेक ऐसे लोग हैं जिन्हें पेट भर खाना नहीं मिलता है !

अपने पिता की देखा-देखी नीलकण्ठ पण्डित दोनों नियमों का कठोरता से पालन

करते थे। लेकिन उन्होंने यह कभी नहीं विचारा था कि ये नेम किस उद्देश्य से किए जाते हैं। उनके पिता ने कहा था कि भोजन करते समय बातें न करनी चाहिए। बस, इसीलिए वे भोजन समाप्त करने तक जवान नहीं खोलते थे। उनके पिता ने कहा था कि पत्तल पर भोजन छोड़ना नहीं चाहिए। वे इसलिए खाने की चीजों में अगर कङ्कड़-पत्थर भी पड़े होते तो उन्हें भी निगल जाते थे। उनके इस नेम के कारण उनकी पत्नी बड़ी सावधानी से रसोई बनाती थी। वह एक-एक चावल को अच्छी तरह साफ कर लेती थी।

चूसने वाली और छिलके बाली तरकारियों के रेशे और छिलके वह पहले ही निकाल देती थी। क्योंकि वे छिलके भी निगल जाते थे। पत्नी की होशियारी के कारण पण्डित को कोई दिक्कत नहीं होती थी। लेकिन मर्द तो हमेशा घर में बैठा नहीं रह सकता !

नीलकण्ठ को काम पर जाना पड़ा। इसीलिए वे कोटीपारा आए और सोमनाथ के घर अतिथि बने। अगर वे पहले ही अनसूया से अपने नेम की बात कह देते तो शायद उन्हें



उतनी दिक्कत नहीं होती। लेकिन नीलकण्ठ उतने होशियार न थे।

बेचारी अनसूया को क्या मालूम कि नीलकण्ठ बड़े नेमी आदमी हैं। इसलिए वह खाना परोस कर खड़ी देखती रही।

नीलकण्ठ बड़ी मुश्किल से साग में के मिरच वगैरह सब कुछ निगल गए। पर, नीलकण्ठ नेमी थे तो अनसूया भोली थी। साग की एक पत्ती न छोड़ कर, पतल साफ करते देख उसने सोचा कि इन्हें साग बहुत पसन्द है। वह जल्दी जल्दी अन्दर गई और बहुत सा साग ले आई। नीलकण्ठ ने दोनों



हाथ फैला कर बहुत रोका; पर अनसूया ने आग्रह से पत्तल में डाल दिया। नीलकण्ठ घबरा गए।

यह देख कर अनसूया ने समझा कि वे शरमा रहे हैं। उसने कहा-"कहाँ, थोड़ा ही तो है।"

किसी तरह बड़ी मुश्किल से नीलकण्ठ ने वह सारा साग खा लिया। यह देख कर अनसूया फिर साग लाने अन्दर गई।

अब तो नीलकण्ठ के होश उड़ गए। उन्होंने हाथ फैला कर पतल को ढक लिया और इशारे से बड़ी देर तक समझाते रहे।

आखिर अनसूया की समझ में आया कि सचमुच साग नहीं चाहते हैं पण्डित जी। तब वह साग यापस ले गई।

नीलकण्ठ पार बार पानी पीकर साग निगलने लगे। थोड़ी देर में ही उनका पेट भारी हो गया और दर्द करने लगा। इसी से वे ज्यादा नहीं खा सके। भात छूट गया। कढ़ी और चटनी भी बच गई। उन्होंने सोचा कि किसी न किसी तरह से खाकर नियम की रक्षा करनी ही होगी। लेकिन इतने में उन्हें कड़ी में तीन सहजनी के टुकड़े दिखाई दिए। बस, ये उन्हें सीठी सहित खा गए। अब उन्होंने भात में चटनी मिलाई कि इतने में अनसूया कटोरे में कढ़ी लिए आ पहुँची। उसने तीन कलछुल कढ़ी परोस कर कहा-"सिर्फ एक कलछुल और डालने दीजिए।"

पत्तल में पड़े हुए सहजनी के टुकड़ों को देख कर नीलकण्ठ की आँखों से आँसू निकल पड़े। उन्हें कुछ न सूझा कि क्या किया जाए। वे माथा ठोंकने लगे।

खाना खाते खाते सोमनाथ ने सर उठा कर यह देखा। वह हका-वक्का सा रह

गया। "क्या बात है, पण्डित जी !" उसने पूछा।

लेकिन नीलकण्ठ ने कुछ जवाब न दिया। तब सोमनाथ ने अनसूया की तरफ देखा। लेकिन वह बेचारी क्या जाने ? "मैंने सोचा कि इन्हें सहजनी के टुकड़े बहुत पसन्द हैं। इसी से सीठी भी खा रहे हैं। इसलिए मैंने फिर कढ़ी परोस दी!" उसने कहा।

"तो इसमें क्या है। वे चाहें तो खा सकते हैं। नहीं तो छोड़ सकते हैं। इसके लिए माथा पीटने की क्या जरूरत है ?" सोमनाथ ने सोचा।

तब उसने नीलकण्ठ से कहा- "पण्डित जी ! अगर आप न खाना चाहें, तो छोड़ दीजिए। इसमें क्या है?"

यह सुन कर नीलकण्ठ ने सोमनाथ की ओर घूर कर देखा।

सोमनाथ को न मालूम हुआ कि इस तरह वे क्यों देख रहे है ! आखिर थोड़ी देर तक सोच-विचार कर उसने पत्नी से कहा-"अब तुम जबर्दस्ती कुछ न परोसो। परोसने से पहले पूछ लिया करो।"



नीलकण्ठ बड़ी देर तक सहजनी का एक एक टुकड़ा चबा कर सीठी के साथ निगलते रहे। सोमनाथ की समझ में नहीं आया कि ये सीठी क्यों खा रहे हैं। पूछने से शायद गुस्सा हो जाएँ। इसलिए वह चुप रह गया।

नीलकण्ठ ने चटनी के साथ कुछ भात खाया। फिर थोड़ा मट्ठा पिया। अब अनसूया उनसे पूछ पूछ कर परोसने लगी। नीलकण्ठ का पेट तो पानी से पहले ही भर गया था। इसलिए चटनी मात भी वे बड़ी मुश्किल से निगल सके। आखिर किसी तरह राम-राम कहते उन्होंने आखिरी कौर भी निगल लिया

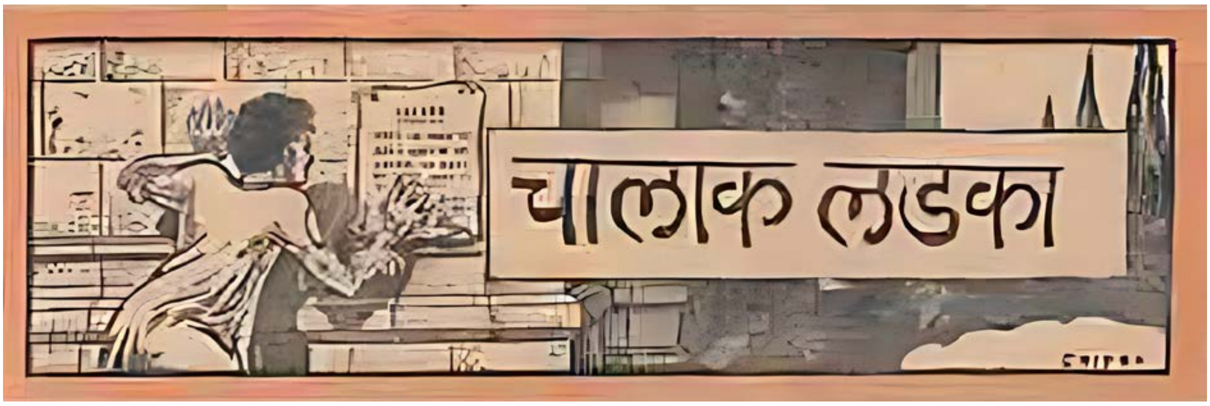
और बाहर जाकर कुल्ला करने लगे। लेकिन जबर्दस्ती खाया हुआ खाना कहाँ पेट में रह सकता था ? तुरन्त "ओ ओ" करने लग गए। कै हो गई। नीलकण्ठ गुस्से से अन्दर आए और पति-पत्नी को कोसने लगे -"मेरी अक्ल मारी गई थी जो मैंने इस घर में कदम रखा। अब कभी नहीं आऊँगा।"

"क्यों, पण्डित जी ! हमसे का कसूर हुआ ? आपने छिलके, सीठी और रेशे भी क्यों खा लिए ? मैंने आपसे बहुत बार पूछा भी। फिर भी आपने कुछ जवाब नहीं दिया। आखिर यह गड़बड़ी क्यों हुई ?" सोमनाथ ने बड़ी नम्रता के साथ पूछा।

"क्या मैं इतना गया-गुजरा हूँ जो सीठी से डर कर अपना नेम तोड़ देता ? सीठी ही क्या, पतल पर अगर पत्थर भी रख दिया होता तो निगल जाता। कुछ भी होता, अपना नेम तो तोड़ता नहीं। कहते हो कि जवाब नहीं दिया। जवाब कैसे देता ? क्या में तुम्हारे लिए अपना नेम तोड़ देता! पूछना तो रहा, अगर तुम चिल्ला चिल्ला कर मर भी जाते तो भी मैं जवाब न देता। भोजन के समय बातें करके मैं अपना नियम कैसे तोड़ देता ?" यह कह कर नीलकण्ठ बड़े गुस्से से चले गए।

अब सोमनाथ की समझ में आ गया कि नीलकण्ठ खाते समय बात नहीं करते और परोसी हुई चीज़ नहीं छोड़ते। उसे यह भी मालूम हो गया कि यह रहस्य उसकी स्त्री की समझ में नहीं आया। तब उसे बहुत दुख हुआ कि मेहमान को नाहक ही कष्ट हुआ। अगर नीलकण्ठ पहले से यह बात बता देते तो कितना अच्छा होता ! लेकिन अब वह क्या कर सकता था ?





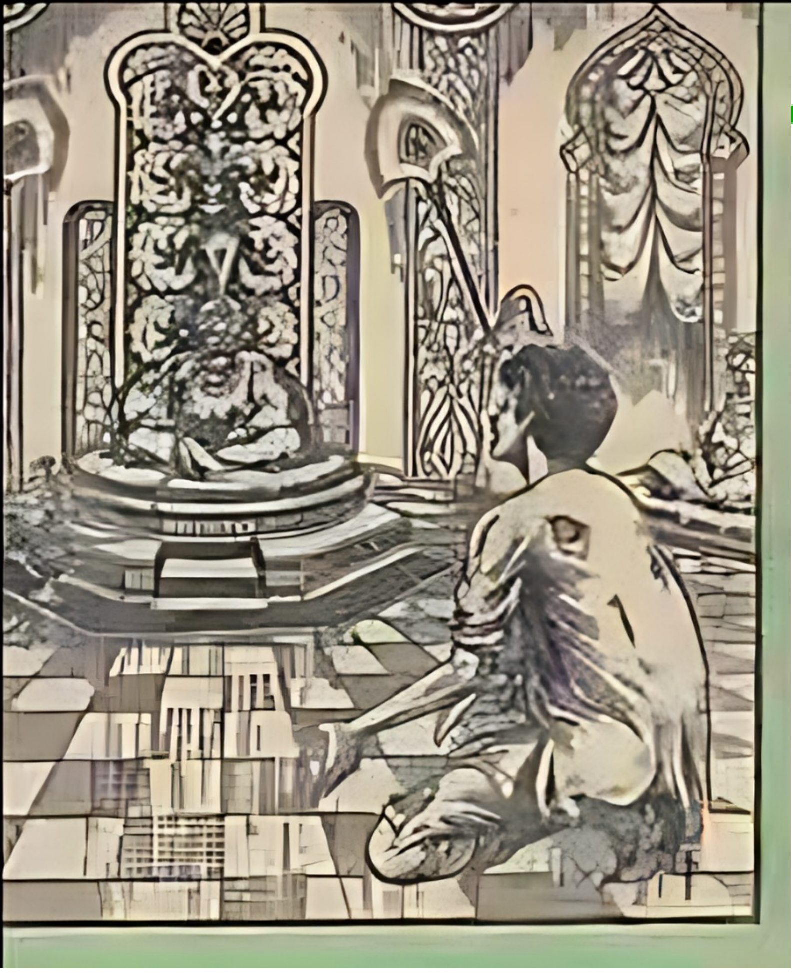
चालाक लड़का

किसी गाँव में मोहन नाम का एक लड़का रहता था। वह बहुत गरीब था। उसके माँ बाप भी नहीं थे। वह कभी उदास नहीं रहता था। वह बड़ा हँसमुख लड़का था। वह हमेशा हँसता-खेलता रहता। यही नहीं, कोई भी उसके पास पाँच मिनट तक मुँह लटकाए नहीं रह सकते थे। वह किसी न किसी उपाय से उनको भी हँसाता। लेकिन उस छोटे से गाँव में जब धीरे धीरे जीना भी मुश्किल हो गया तो मोहन ने सोचा-"अब मुझे यह गाँव छोड़ना ही पड़ेगा।

वह एक दिन गाँव छोड़ कर चल पड़ा। जाते जाते एक नगर में जा पहँचा। उस नगर पर एक दानी बादशाह राज करता था। उसने एक विचित्र कानून जारी कर रखा था। वह यह था --उसके राज्य में जो कोई अनाथ मनुष्य मर जाता उसे दफनाने के लिए सरकार की ओर से पचास अशर्फियाँ दी जाती।

उस कानून की बात जब मोहन ने सुनी तो उसे एक अच्छा उपाय सूझा। दूसरे दिन उसने बादशाह के पास जाकर बड़ी नम्रता से अपनी राम कहानी कह सुनाई।

सुनने के बाद बादशाह ने कहा- "लड़के। हमारा कानून सिर्फ मुर्दा लोगों के लिए है। जिन्दा लोगों के लिए नहीं। क्योंकि जिन्दा लोग काम करके किसी न किसी तरह रुपया कमा सकते हैं। लेकिन मुर्दों को कौन रूपया कमा कर देगा ? इसीलिए हमने ऐसा कानून बना रखा है। हाँ, अब



यह सुन कर मोहन ने कहा-"हुजूर! जरा मेरी बात तो सुन लीजिए। मान लीजिए कि मैं पूरी तरह मर गया। तब तो कानून के मुताबिक आपको मेरे लिए पचास अशर्फियाँ खर्च करनी ही पड़ेगी। अगर हुजूर आधी रकम यानी पच्चीस अशर्फियाँ ही अभी मुझे दे दें तो में आपका राज छोड़ कर चला आऊँगा और हुजूर को पचीस अशर्फियों का लाभ होगा। हुजूर समझ गए मेरी बात ?" उसने अच्छी तरह बादशाह को समझाया।

तुम लौट जाओ। किसी तरह काम-काज करके अपना पेट पालो। में तुम्हारी कुछ भी मदद नहीं कर सकता।"

तब मोहन ने कहा-"हुजूर! आप मेरा भी जिन्दा लोगों में शुमार कर रहे हैं। लेकिन यह आपकी भूल है। मैं भूख-प्यास के मारे कभी का अधमरा वन गया हूँ। शायद शीघ्र ही मर भी जाऊँगा। आपको मुझे भी मुर्दों में गिनने का मौका जल्दी ही मिलेगा।"

"अच्छा! तुम्हारे मर जाने के बाद मैं जरूर तुम्हारी मदद करूँगा।" बादशाह ने कहा।

उसकी बात बादशाह को जँच गई। उसने सोचा-"पच्चीस अशर्फियाँ देकर क्यों न इससे पिण्ड छुड़ा लूँ! इस तरह पच्चीस अशर्फियों की बचत होगी।" उसने तुरन्त पच्चीस अशर्फियाँ मँगवाई और मोहन को दी।

मोहन अशर्फियाँ लेकर खुशी खुशी उसी नगर में जिन्दगी बिताने लगा।

कुछ दिन बाद अचानक उस नगर में हैजा फैला। लोग धड़ाधड़ मरने लगे। बादशाह का हुक्म हुआ कि लोग सभी नगर छोड़ कर भाग जाएँ और अपनी जान बचाएँ।



तब मोहन ने फिर बादशाह के पास जाकर कहा-"हुजूर! मुझे पहले ही मर जाना चाहिए था। लेकिन आपकी कृपा से जान बच गई। यहाँ से भाग जाना ही चाहता था कि इतने में हैजा फैल गया। क्या करूँ इस बार तो जान नहीं बचेगी।"

"लड़के ! तू अभी तक नगर छोड़ कर नहीं गया ! जा ! भाग जा तुरन्त यहाँ से! नगर छोड़ कर अपनी जान बचा ले।" बादशाह ने उससे कहा।

"हुजूर ! मैं कैसे जाऊँ! आपकी दी हुई पच्चीस अशर्फियाँ तो कभी की खर्च हो गई। यहाँ से भागने में रुपया लगता है और मेरे पास फूटी कौड़ी भी नहीं है। इधर देखू तो हैजे का बड़ा जोर है। किसी को मालूम नहीं कि वह कितनी घड़ियों का मेहमान है। अगर इस बार में सचमुच मर गया तो आपको कानून के मुताबिक पचास अशर्फियाँ देनी ही पड़ेगी। लेकिन वास्तव में पचीस अशर्फियाँ आप पहले ही दे चुके हैं। यानी आपको एक तिहाई ज्यादा खर्च पड़ रहा है। मैं इसी सोच में पड़ा हूँ कि आपकी अशर्फियाँ कैसे बच जाएँ।" मोहन ने बादशाह से कहा।

बादशाह ने मोहन की चालाकी को सराहते हुए कहा-"लड़के! तू तो देखने में बहुत छोटा है। लेकिन बुद्धि में बड़ा है। मैं तेरी चालाकी से बहुत खुश हूँ। जा, मैं तुझे अपना एक मन्त्री बनाता हूँ। तू अब हमारे दरबार में रह जा। यह कह कर बादशाह ने उसे अपना मन्त्री बना लिया। तब से मोहन की जिन्दगी चैन से कटने लगी।



प्रयुत नाम के एक ऋषि थे। उनके अयुत और नियुत नाम के दो लड़के थे। इन दोनों भाइयों ने मुनिवर अगस्त्य के पास सब तरह की विद्या सीखी थी। उनके गुरु उन दोनों को बहुत प्यार करते थे। इसलिए उन्होंने सोचा कि मुझे इन दोनों का व्याह भी कर देना चाहिए। तब उन्होंने ध्यान लगा कर देखा कि इनके योग्य लड़कियाँ कहाँ मिलेंगी !

ध्यान में उन्हें ब्रम्हाजी के पास दो कुमारियाँ दिखाई पड़ी। तुरन्त अगस्त्य ऋषि कमण्डल हाथ में लेकर ब्रम्हाजी के पास पहुँचे और अपनी इच्छा कह सुनाई।

ब्रम्हाजी ने बड़ी खुशी के साथ गायत्री और सावित्री नामक उन कुमारियों को बुलाया और अगस्त्य के हाथों में सौंप दिया।

वे उन लड़कियों को साथ लेकर पालक झपकते अपने आश्रम को लौट आए। आश्रम में आकर उन्होंने अपने दोनों चेलों को बुलाया और कहा-"बेटा अयुत। इस गायत्री से तुम व्याह कर लो। सावित्री तुम्हारे भाई की स्त्री बनेगी।"

यह सुन कर छोटा भाई नियुत बहुत खुश हुआ। लेकिन अयुत ने मुँह विचका कर कहा-"मैं ब्याह-वाह कुछ नहीं करूँगा।"

"मैं ब्रम्ह-लोक जाकर तेरे लिए यह लड़की ले आया हूँ। फिर तू 'नाही' क्यों करता है! अभागा कहीं का।" ऋषि की आँखें लाल हो गई।

लेकिन अयुत एकदम निडर बना रहा। "गुरुवर! ब्याह करने से घर-गिरस्ती का बोझ सिर पर आ पड़ेगा। इस जाल में

फँस जाऊँगा तो मोक्ष कैसे पाऊँगा !" उसने कहा।

"अभी से तुझे मोक्ष की चिन्ता क्यों हो गई ! क्या तू समझता है कि सिर्फ अनब्याहे रह जाने से मोक्ष मिल जाएगा ! पागल कहीं का! बचपन में पढ़ना चाहिए। पढ़ाई पूरी होने के बाद व्याह करना चाहिए और घर आए साधु-सन्तों की सेवा करनी चाहिए। सन्तान उत्पन्न करके देश का उद्धार करना चाहिए जिससे पितृ देवों का ऋण चुके। मोक्ष तो बानप्रस्थ आश्रम की बात है। गृहस्थ आश्रम का कर्तव्य पूरा करके बुढ़ापे में अगर चाहो तो तुम घर-बार छोड़ देना और अपनी स्त्री के साथ जङ्गल में जाकर भगवान का नाम जपना और मोक्ष के लिए प्रयत्न करना। लेकिन अभी तो तुम्हें यह करना ही चाहिए।" ऋषि अगस्त्य ने उसे समझाया।

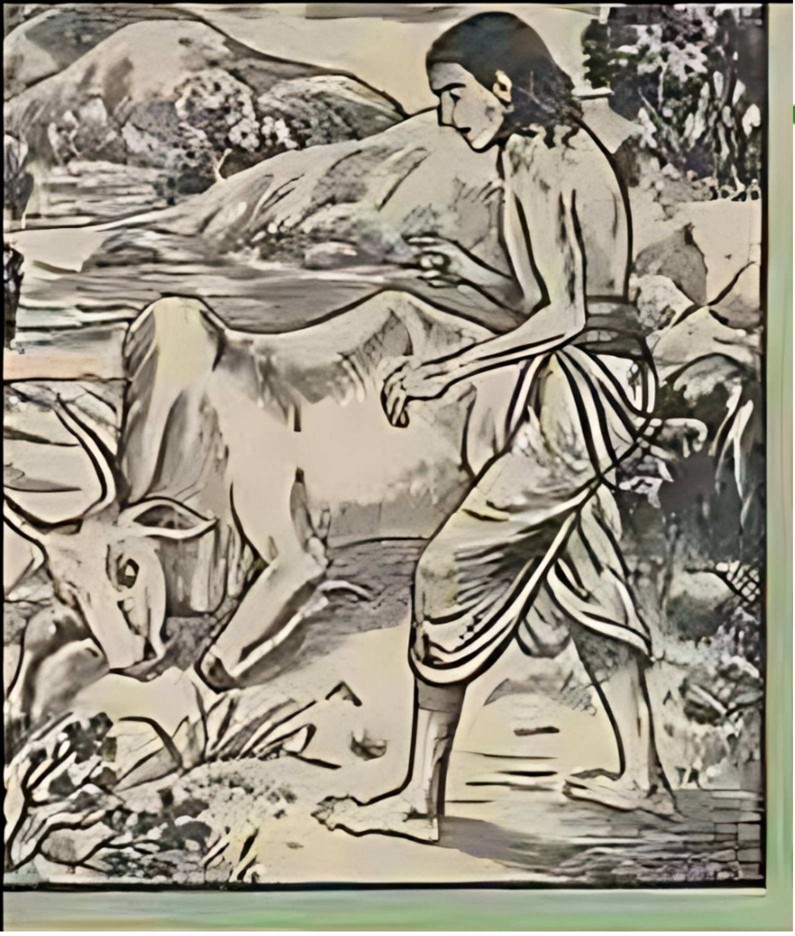
लेकिन अयुत अपनी बात पर अड़ा रहा। यह देख कर अगस्त्य को बड़ा गुस्सा आया। लेकिन उन्होंने अपने आपको बहुत रोका और शाप न देकर उस हठी को सिर्फ आश्रम से



निकाल दिया। ब्रम्ह-लोक से लाई हुई दोनों कन्याओं का व्याह उन्होंने नियुत से ही कर दिया।

अयुत गुरु का आश्रम छोड़ कर हिमालय की ओर चला गया। वहीं जाकर वह उग्र तप करने लगा।

थोड़े ही दिनों में उसके तप की बात सारे संसार में फैल गई। सबसे पहले यह बात इन्द्र को मालूम हुई। इन्द्र भयभीत हो उठा। क्योंकि उसे तो हमेशा यही शङ्का लगी रहती है कि उग्र तप करने वाले भगवान से कहीं इन्द्रासन न माँग लें। आखिर उसे एक उपाय सुझा। उसने अपना भेष ब्राम्हण का सा



बनाया और कुछ देवताओं को अपना शिष्य बना कर, कामधेनु के साथ अयुत के घर जा पहुँचा। कामधेनु भी एक मामूली गाय बन गई थी।

ब्राम्हणों को अपने द्वार पर आया देख कर अयुत ने उनका खूब स्वागत-सत्कार किया। भोजन के लिए कन्दमूल और फल जो भी उसके पास थे, बड़े आदर से सामने लाकर रखे।

कपटी ब्राम्हण ने बड़े प्रेम से पूछा- "बेटा! तुम्हीं सब काम कर रहे हो! क्या तुम्हारी पत्नी नहीं है !"

"मैंने व्याह नहीं किया। तप करके शीघ्र मोक्ष पाने के लिए मैं ब्रम्हचारी ही रह गया हूँ।" अयुत ने जवाब दिया।

"यह तो तुमने बड़ी मूल की। ब्याह करके घर-गिरस्ती का सुख भोग कर फिर मोक्ष के लिए प्रयत्न करना चाहिए। अभी तुम्हारी उम्र ही क्या है। इसलिए जल्दी ही एक अच्छी कन्या देख कर ब्याह कर लो!" उस वेश धारी बूढ़े ब्राह्मण ने कहा।

"आप ब्यर्थ क्यों इसकी चिन्ता करते हैं ? मैं इस विषय में किसी की सलाह नहीं चाहता।" अयुत ने कहा।

यह सुनकर इन्द्र गुस्से से तमतमा उठा। उसने कामधेनु को वहीं छोड़ दिया और जाते जाते उसके कान में कुछ कह दिया।

दूसरे दिन अयुत लकड़ियाँ लाने जङ्गल गया तो कहीं से गाय के रम्भाने की आवाज उसके कानों में आई। जिस ओर से आवाज आई, उसने उधर जाकर देखा तो मालूम हुआ कि ब्राह्मण के साथ उस दिन जो गाय आई थी, वही वहाँ पड़ी हुई है। वह ऐसी

हालत में थी कि उठ भी नहीं सकती थी। अयुत को उस पर बड़ी दया आई और बड़े प्रेम से वह उसकी सेवा करने लगा। धीरे धीरे वह गाय चलने-फिरने लगी।



इस बीच में अयुत का सारा समय गाय की सेवा में लग गया और तप करने की फुरसत ही उसे नहीं मिली। बात यहीं तक नहीं रुकी। उस गाय के कारण अयुत भारी झञ्झट में पड़ गया। बात यह हुई कि कुछ ही दिनों में उस गाय के एक सुन्दर बछड़ा पैदा हुआ।

अयुत ने दोनों की खूब देख-भाल की जिससे गाय और बछड़ा खूब मोटे-ताजे हो गए और आस-पास के आश्रमों में जाकर वहीं के बाग-बगीचे ध्वंस करने लगे।

मुनियों ने आकर अयुत से शिकायत की। अयुत ने खूब सोचा-विचारा और गाय बछड़े को लेकर किसी दूसरे जङ्गल की ओर चल पड़ा। इतने में गाय एक छलाँग मार कर भागी। बेचारा अयुत उसकी रस्सी पकड़ कर चल रहा था। वह एक बाँबी पर जा गिरा। वह धीरे धीरे उठा और अपना बदन झाड़ कर चलना ही चाहता था कि उस बाँबी से मनुष्य की आवाज आई।

"कौन है रे तू ! मेण्ढक की तरह उछलता फिरता चलता है। जा, मेण्ढक बन जा !"

अयुत भय से काँप उठा। गौर से देखा तो एक मुनि तपस्या कर रहे थे। वह उनके पैरो पर गिर पड़ा और क्षमा-याचना करते लगा। मुनि को सारी बात मालूम हुई तो उस पर तरस आ गया। इन्द्र की चालाकी उन्हें मालूम हो गई। उन्होंने अयुत से कहा-"बेटा! मेरा शाप झूठा नहीं हो सकता। तुम्हें मेण्ढक बन कर पैदा होना ही

होगा। लेकिन तुम मोक्ष चाहते हो। इसलिए मैं ऐसा वर देता हूँ जिससे तुम बिठ्ठल भगवान के मन्दिर वाले तालाब में पैदा हो।"

अयुत उसी समय मेण्ढक हो गया। कामधेनु इन्द्र के पास पहुँची। सारा किस्सा सुनकर इन्द्र को बड़ी खुशी हुई। लेकिन अयुत के लिए मुनि का वह शाप वरदान बन गया। क्योंकि उसे भगवान बिठ्ठल के पास रहने और हमेशा हरि-कीर्तन सुनते रहने का सौभाग्य मिला।

कुछ दिन बाद एक राजकुमारी अपनी सखियों के साथ भगवान के दर्शन के लिए आई। भगवान के पास एक मेण्ढक को देख कर वे सभी बहुत खुश हुई और उसे पकड़ने की कोशिश करने लगी। मेण्ढक ने शौक से अपने को राजकुमारी के हाथ पकड़वा दिया।

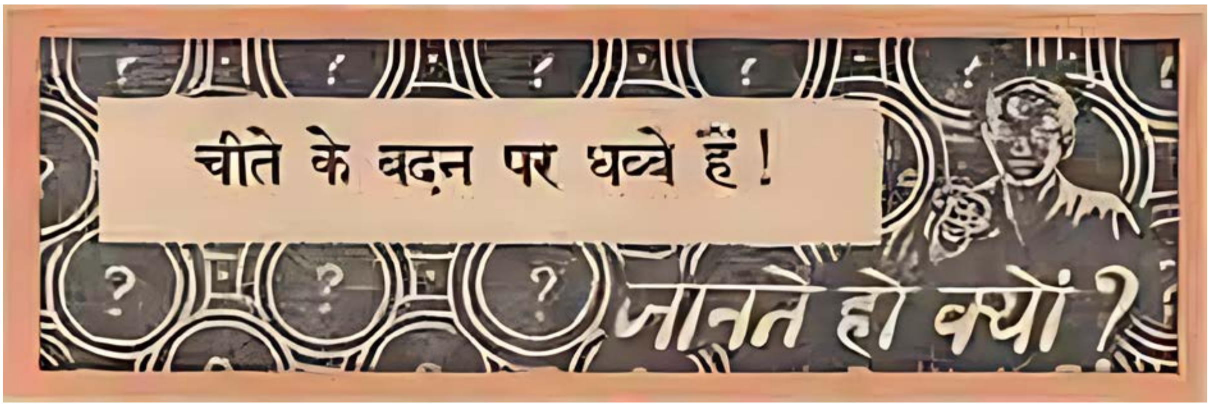
"देखो। मैंने इसे पकड़ लिया है।" कह कर राजकुमारी उस मेण्ढक के साथ खेलने लगी। पास ही एक ऋषि तपस्या में लीन दीख पड़े। राजकुमारी ने अज्ञानवश उस मेण्ढक को उन पर डाल दिया।

चौक कर मुनि ने कहा-"अरी लड़की ! मालूम होता है, तेरा मिजाज आसमान पर चढ गया है। नहीं तो मुझसे मजाक करने चलती ! मुझ पर मेण्ढक फेंक दिया है तूने। इसलिए जा । तू मेण्ढकी बन जा और इस मेढ़क से व्याह कर ले !"

अब क्या था ? वह राजकुमारी भी एक मेण्ढकी बन गई और अयुत से उसका ब्याह हो गया। उनके एक लड़का भी पैदा हुआ। वह मनुष्य हुआ और भगवान बिठ्ठल का बड़ा भारी भक्त हुआ।

उस लड़के से प्रसन्न होकर भगवान ने उसके माँ-बाप को भी मनुष्य बना दिया। वे सभी मोक्ष के योग्य बने और अयुत की इच्छा पूरी हुई।





बाघ-गाँव में एक बहुत बड़ा नीम का पेड़ था। उस गाँव के लोगों का विश्वास था कि उस पेड़ पर कोई देवी रहती है। इसलिए उस पेड़ पर दल्दी और सिन्दूर लगा कर वे उसकी पूजा करते और हर साल उस जगह उत्सव भी करते। वहाँ मनौतियाँ मनाने से बहुत लोगों की इच्छाएँ पूरी होती। इससे उस देवी पर लोगों का विश्वास और भी बढ़ जाता। कोई उस देवी पर शङ्का करता तो उसके ऊपर कोई न कोई सङ्कट अवश्य आ पड़ता और वह समझता कि उसे देवी दण्ड दे रही है। आखिर उसे देवी के सामने घुटने टेक कर माफी माँगनी पड़ती।

एक बार एक गीता घूमता फिरता उधर आ निकला। (उन दिनों चीते का बदन साफ रहता था और उस पर धब्बे बिलकुल नहीं होते थे।)

चीता उस नीम के पेड़ के पास गया तो देवी का उत्सव करके लौटती हुई भीड़ उसे दिखाई दी। उनके हाथों में देवी के आगे चढ़ाने के लिए तरह तरह की खाने की चीजें थी। यह देख कर चीते के मुँह से लार टपक पड़ी और उसने सोचा- थोड़ी देर में सब लोग यहाँ से चले जाएंगे। यहाँ कोई न रहेगा और देवी के सामने तरह तरह की चीजें पड़ी रहेंगी। देवी तो कुछ खाएँगी नहीं। वाह। आज तो मेरी पाँचों उगलियों घी में हैं। खाते खाते अफर जाऊँगा।"

थोड़ी देर में अन्धेरा हो गया। चीता देवी के मन्दिर में गया तो उसे मूर्ति दिखाई पड़ी। "वाह! वाह ! कैसी देवी है यह ? सारे बदन में हल्दी लगी है। बदन पर सिन्दूर के

धब्बे भरे हैं। तो क्या यही देवी है ! यही पेड़ देवी!" चीते को बड़ी हँसी आई। हँसता हँसता चीता देवी के आगे रखी हुई चीज़ों पर टूट पड़ा। खाते-खाते चीता देवी का मजाक भी उड़ाता जाता था। "वाह! किसी देवी है यह ? सारे बदन पर धब्बे हैं।" उसने कहा।

उसकी ये बातें सुन कर देवी गुस्से से आग-बबूला हो गई। "इस बदमाश को कड़ी सजा देनी चाहिए।" देवी ने निश्चय किया।

चीते ने भरपेट देवी का प्रसाद खाया। फिर वहाँ से जङ्गल की तरफ चला। राह में उसे एक काला नाग दिखाई पड़ा।

"वाह ! मेरे मित्र! तुम्हारे बदन पर भी देवी की ही तरह धब्बे हैं !" उसने उस नाग की भी मखौल उड़ाई।

तम नाग फुफकार उठा। उसने कहा-"अच्छा, तो लो! तुम भी अपने बदन पर धब्बे लगा लो।" यह कह कर नाग ने चीते को काट लिया।

तुरन्त चीते के सफ़ेद, उजले बदन पर फोड़े निकल आए। पालक झपकते ही नाग देवी के रूप में बदल गया।

यह देख कर चीता देवी के पैरों पर पड़ गया और माफी माँगने लगा। देवी ने तरस खाकर कहा-"अच्छा! जाओ। नीम की पतियों का रस सारे शरीर में मल लो !" यह कह कर देवी गायब हो गई।

चीते ने नीम की पत्तियाँ तोड़ीं और उनके रस का लेप लगाया। पल भर में फोड़े सूख गए और उसके सुन्दर चमकीले बदन पर धब्बे भर रह गए। लेकिन ये धब्बे देखने में बहुत सुन्दर लगने लगे। इसे देवी की कृपा समझ कर चीता बहुत खुश हुआ। उस दिन से सभी चीतों के बदन पर धब्बे निकल आए।



CHANDAMAMA (HINDI) APRIL 1951 REGD. NO. M. 5452



बाड़ी में चोर